नन्हीं सी उड़ान

डॉ. उम्मेद सिंह बैद 'साधक'

Published By
Dhriti Research Foundation
Loknath Abasan, 8A Kolupukur Road
Teghoria, kolkata - 700157

Nanhi Si Uran
Written by Dr. Ummedsingh Baid

ISBN

Published by : Dhriti Research Foundation
Loknath Abasan,8A Kolupukur Road
Teghoria, Kolkata - 700157

1st Edition
All rights reserved to Dhriti Research Foundation
Printed By :

Price :

नन्ही सी उड़ान
डॉ. उम्मेद सिंह बैद ' साधक '
प्रकाशक : **धृति रिसर्च फ़ाउंडेशन**
लोकनाथ आवासन, ८ए कोलुपुकुर रोड,
तेघरिया, कोलकाता – ७००१५७

मुद्रक :

मूल्य :

सम्पादकीय

नन्हीं सी उड़ान काव्य रिचर्ड बाख के प्रसिद्ध उपन्यास 'जोनाथन लिंग्विस्टन सीगल' पर आधारित एक मनमोहक रचना है। यह काव्यरचना एक पिता द्वारा अपनी पुत्री को केन्द्र में रखकर एक विशेष प्रकार के मानसिक परिवेश में लिखी गई है। डॉ. बैद ने इस कृति को रचते समय एक बालिका की महत्वाकांक्षाओं, सपनों को पूरा करने का प्रयास, जिज्ञासा एवं साहस का सहज वर्णन करते हुए उसकी मानसिकता और परिस्थितियों के उतार-चढाव का व्यापक विश्लेषण किया है। रचना में जहां एक पिता का अपनी पुत्री के प्रति स्नेह प्रतिबिम्बित है, वहीं उसके भविष्य की अनजान यात्रा के सम्बन्ध में आशंका भी निरन्तर प्रकट होती रही है।

एक नन्हीं सी उड़ान रचना के माध्यम से कवि ने सामान्य मानव की सोच, उसके आगे बढने की आंकांक्षा और लगन को बड़ी ही बारीकी से शब्दबद्ध किया है। यह एक सामान्य प्रक्रिया है कि व्यक्ति जैसे-जैसे इस बाह्य जगत से सम्बन्ध बढाता चला जाता है, उसके अपने करीबी सम्बन्धी एवं रिश्तेदार स्वतःही पीछे छूटते चले जाते हैं। एक चिड़िया जितनी ऊँची उड़ान भरती है, धरती का तल उससे दूर होता चला जाता है। इस सहज प्रक्रिया को जागतिक सम्बन्धों में भी बड़ी आसानी से देखा जा सकता है। व्यक्ति अपने पुरुषार्थ से एक निश्चित ऊँचाई तो पा लेता है, किन्तु उसके भीतर एक गहन अकेलापन अनजाने ही स्थान लेने लगता है। यही इस ऊँची उड़ती चिड़िया के साथ भी होता है जब उसे अपने भाई-बन्धु-हितैषी दूर होते दिखाई देतें हैं। व्यक्ति वापस लौटकर उन्हीं सम्बन्धों के बीच अपना स्थान ढूंढ खोजे नहीं पाता। उसे अपने नव-सृजित परिवेश में ही अपना स्थान प्रयत्न पूर्वक बनाना होता है। अस्तित्व सदैव आगे बढता है, यहां पीछे लौटने की व्यवस्था नहीं है। इस रचनाकार साधक का मूल स्वर भी यही है। अपनी सुपुत्री को निमित्त बनाकर लिखी गई यह रचना समाज के सभी बेटे-बेटियों के लिए प्रेरक-उपयोगी एवं विचारणीय है।

इस सरस काव्य-रचना का आनन्द लेते हुए यह संदेश ग्रहण किया जा सकता है कि हर ऊँचाई के आगे भी यात्रा जारी रहती है। मानव अपनी वर्तमान स्थिति-गति में सहज जीना सीख ले, यही काम्य है।

-संजीव तिवारी

अनुक्रमणिका

1. चिट्ठी गुड़िया के नाम…………………………………………………… 1-2
2. नन्हीं!.. ……………………… 3-4
3. सकारात्मकता………………………………. ……………….…….. .. 5-7
4. कृतज्ञता ……………………………………………………..……... 9-11
5. आनन्दम ………………………………………………………………. 13-14
6. उड़ान, एक सपना, मृत्यु से पहले …………………………………..... 15-17
7. अभ्यास ……………………………………………………….……… 19-21
8. जोर अपना ही ……………………………………………………… . 23-24
9. जान का खतरा ……………………………………………………... 25-27
10. मेंढकी को जुकाम ……………………………………….……….... 29-30
11. बाधक परम्परा ………………………………………….……...... 31-33
12. ऊँची उड़ान …………………………………………………..……. 35-37
13. मरम्मत ……………………………………………………….…….. 39-40
14. अटूट विश्वास ……………………………………………………..... 41-42
15. फिर जीती नन्हीं ………………………………………………… .. 43-44
16. नई राहों पर…………………….....…………….……………..... 45-46
17. रुकी सी कहानी …………………... 47-48
18. कहानी फिर शुरु …………………………….. …………..... 49-50
19. फ़िर प्रथम ……………………………………………………..... 51-52
20. नन्हीं से आगे ……………………………………………….…..... 53-54
21. टूटते परम्पराबन्धन- ……………………………………………... 55-56
22. अनजानी डगर पर ………………………………………..…….... 57-58
23. अतीत की यादें ………………………………..……………... 59-60
24. रिश्तों का सच! ……………………………………….………….. 61-62
25. शेष कथा ……………………………………………….………... 63-64
26. झरना और पर्वत…………………………………………………… 65-67
27. कबूतर की पीड़ा ………………………………………………….. 69-70
28. गणेशजी की सूंड ………………………………………..….......... 71-73
29. लौट के बुद्धू घर को आये …………………..…………...…........ 75-76
30.पटरी और पहिये ……………………………………..……......... 77-78

चिट्ठी गुड़िया के नाम

अपनी प्रिय बिटिया के नाम नाम 18 वर्ष पूर्व लिखी यह कविता पुराने पत्र-संग्रह में मिली है। संभव है कि मेरी अनेक बेटियों का मन छू ले। यह भी संभव है कि अनेक पितृ-हृदय मित्रों को यह अपनी सी लगे।

कहो सुप्रिया कैसी हो, और क्या हैं मन के हाल?
पापा की चिट्ठी पाकर, क्या होता तेरा हाल?

यह तो कहो कहानी तुमको, अच्छी लगती है क्या?
सदा-अधूरी आती है, तुम समझ भी पाती हो क्या?

तुम चाहो तो इसको एक ही पत्र में पूरा कर दूँ।
अथवा फ़िर धीरे-धीरे कर रोज यही मैं लिख दूं।

तुम चाहो तो छोड़ कहानी घटनायें लिख भेजूं।
जिससे तुम खुश होती हो मैं वही बात लिख भेजूं।

भैया के तो इम्तिहान हैं तंग ना उसको करना।
छोटी-छोटी बातों पर उससे ना रोज झगड़ना।

माँ भी होगी व्यस्त तुम्हीं लिख देना घर की बात।
तेरी चिट्ठी पाकर गुड़िया, पाता हर सौगात।

11-10-19972

नन्हीं!

नन्ही सुन लो आज तेरे भैया ने दिल जीता है।
तन में लक्ष्मण सी फुर्ती है,पर मन से सीता है।

तेरी मां ने लाख मनाया, लेकिन वह ना माना।
मुझको गाड़ी में बिठलाकर, खुद को विजयी जाना।

मैं कितनी ही बात करूँ, पर उसकी एक ही बात।
वजन दोगुना हो पापा का, बदले यह हालात।

जाते-जाते प्रसन्न मन से उसकी सुनी नसीहत।
स्वास्थ्य बनाना है मुझको,ऐसी है पक्की नीयत।

हाँ यह भी सच है कि साथ में,काम बहुत हैं मेरे।
पर कोशिश है रहे प्रफुल्लित, मेरे साँझ-सवेरे।

इस कोशिश में तुम प्रातः और रात में तेरा भैया।
यादों में आ जाओ तो फिर पार है मेरी नैया।

शुभकामनाएँ दीदी को तेरी मां को प्रेम निरन्तर।
दादाजी हैं पूज्य सभी के, घर है अपना सुन्दर।

गाड़ी हुई रवाना, अब सोने की है तैयारी।
कल प्रातः से शुरु हो रही,काम से अपनी यारी।

सुन लो बिटिया पापा की, प्यारी ये सारी बातें।
पढकर सो जाओ, मीठे सपनों से भर लो रातें।

4-9-97, ट्रैन – बीकानेर की तरफ़ यात्रा,   रुग्ण शरीर

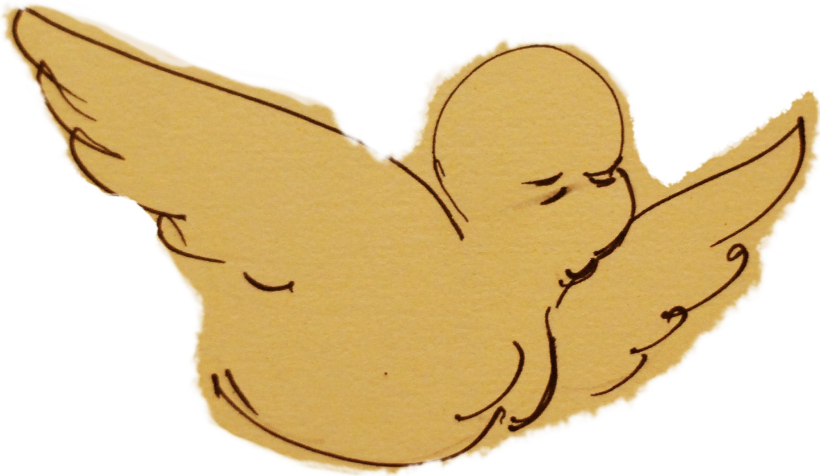

सकारात्मकता

यह गीत बनते समय दुसाध्य बीमारी से ग्रस्त थी साधक की देह! आत्मीय चिकित्सकों और ज्योतिषियों ने चिन्ता प्रकट की थी कि यह शरीर अगली शताब्दी नहीं देखेगा! प्रयोजनीयता और सकारात्मकता ने अब तक देह को बचाये रखा है। सकारात्मक मन की बानगी है अपनी बिटिया को लिखा यह गीत। छन्द-ताल-लय कुछ नहीं, बस प्रेम!

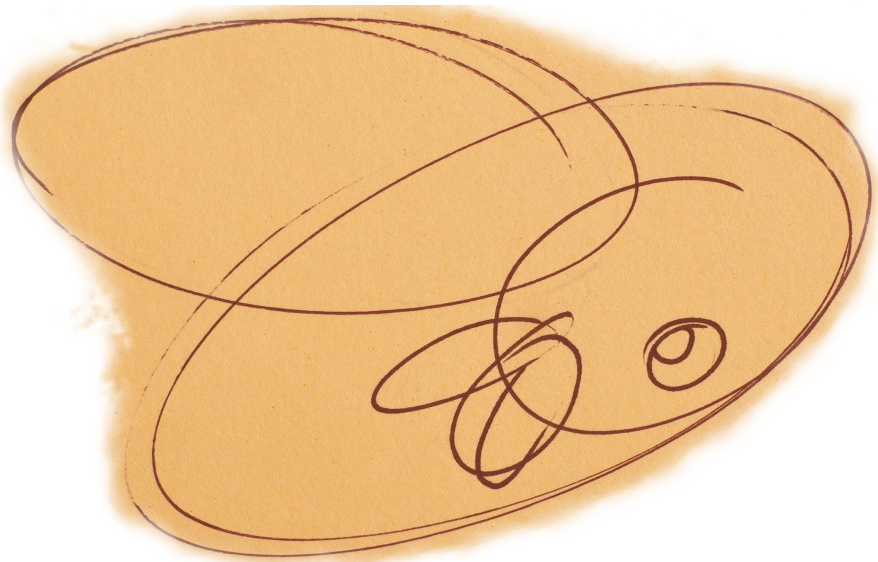

प्रातः हुई सूर्य की ठंडी, किरणों का फैला साम्राज्य।
नन्हीं की मुस्काती आंखों का दिखता यह अद्भुत राज्य।

हरियाली चादर ओढे, पसरी है सुन्दरी देखो।
शबनम की बूंदों से भीगी, वह रसवन्ती देखो।

बारिश में भीगा सा मौसम, और परछाई पेड़ों की।
पानी में उल्टी दिखती है, वह लम्बाई पेड़ों की।

प्रातःकाल का समय देख लो, इतना प्यारा होता।
है दुर्भाग्य उसीका जो, इस काल में रहता सोता।

खेतों पर बच्चे-बूढे, किसान आ गये हैं देखो।
घर से उठकर काफी चलकर आये कैसे देखो।

जाने क्या है बात,पशु-पक्षी क्यों इतने कम हैं।
सूना है आकाश,धरा को इसी बात का गम है।

इंसानों ने हिंसा के बलपर यह पाप किया है।
पशु-पक्षियों से अवनी को यूँ नाबाद किया है।

बहुत जरूरी है फैले अब प्रेम,दया और ममता।
मानव मन में उपजे प्राणी -जगत की खातिर समता।

ना हो पाया ऐसा तो,वीरान लगेगी धरती।
इन्सानों के कृत्यों को,कोसेगी सारी परती।

धरती सी सुन्दर बिटिया महके-चहके-लहके।
अपने पूरे वैभव संग युग-युग तक यूं ही चमके।

5-9-1997, रेलगाड़ी, बीकानेर यात्रा, रुग्ण देह।

कृतज्ञता

सावन-भादों के महीने में बीकानेर का वैभव देखने जैसा होता है। मझली बहन सरोज बीकानेर रहती है। उसके भरोसे यह रुग्ण देह चिकित्साधीन रही। स्वनाम-धन्य ताराचन्दजी सिपानी के संयुक्त परिवार में 6X6X6 के कमरे में अपनी पूरी गृहस्थी चलाती बहन ने इस अति-रुग्ण भैया की देह को संभाला। प्रातः 11 बजे रेलगाड़ी से सरोज-विमलजी और जियाबाई ने इस मरियल साधक को अतीव कारुणिक डबडबाती आँखों से तोला था। उनको भी सूचना थी गंभीर बीमारी की। वकील साहब का ग्रन्थालय-अतिथिकक्ष और घर का सबसे अच्छा हॉल इस साधक को मिला था। हो सकता है कि संयुक्त परिवार के सदस्यों के लिये कष्टदायक हो, किन्तु इस अतिथि के लिये वरदान साबित हुआ। वहीं बनी ऐसी अनेक रचनायें—

कल दिन भर लिखना और पढना चला शान से।
बिटिया की भी सुखद   याद थी बड़े मान से।

प्रतियोगिता में इसने, अपनी धाक जमाई होगी।
बीस जनों के बीच ये निश्चित प्रथम ही आई होगी।

सात दिनों का आयोजन बिटिया का नाम बढाता ।
तेरापंथी जन-गण-मन में तो पूरी धाक जमाता।

हो सकता है थकी हुई हो, श्रम हो गया हो काफ़ी।
उपवास है संवत्सरी का, थक सकती है काफ़ी।

लेकिन दीदी के चोले से हिम्मत आई होगी।
भैया और मम्मी के संग, तुम भी उपवासी होगी।

अच्छा है कल रविवार है, मिलेगा यूँ आराम।
भोजन तब स्वादिष्ट लगेगा, और अच्छा विश्राम।

तन मन की शुद्धि होती है, व्रत उपवास से पूरी।
मन से भूखा रहना है, ना ऊपर की मजबूरी।

दीदी को तो चार दिनों तक, रसाहार ही अच्छा।
अन्न नहीं जल्दी ले तो, उसका शरीर हो अच्छा।

भैया को पढने देना, ना करना तुम परेशान।
हो उत्तीर्ण तभी बिटिया की बढ़ पायेगी शान।

6-9-1997, बीकानेर

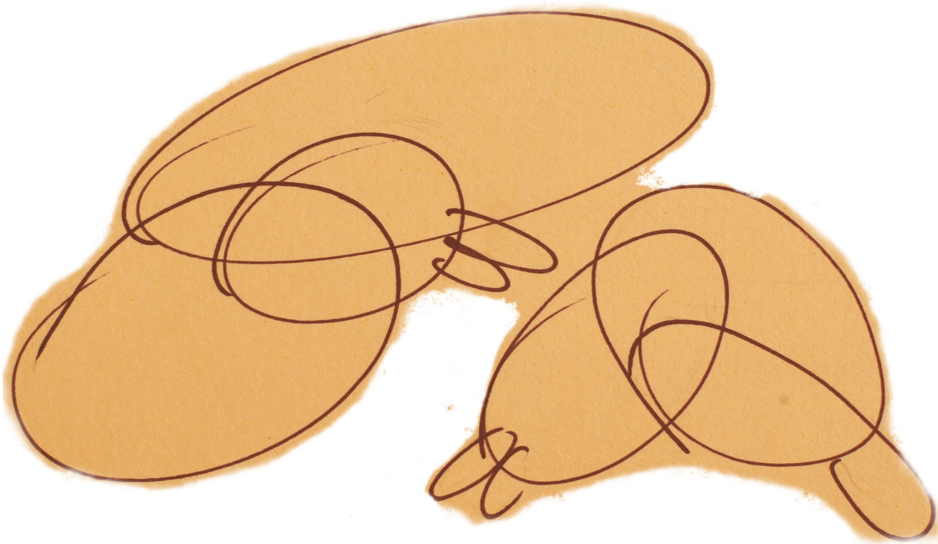

आनन्दम

तन रुग्ण-मन स्वस्थ! देह चिन्ताजनक-मन उत्साहजनक! यही संकेत मिलता है अपनी नन्हीं बिटिया को लिखे इस पत्र से -

स्नान किया है दो दिन से, तब ही आराम मिला है।
रात में आंखें दुखती थी, घर में विश्राम मिला है।

लिखने का मन बहुत है लेकिन गाड़ी हिलती ज्यादा।
अक्षर बिगड़ न जाये मेरे, यही फ़िक्र है ज्यादा।

बीकानेर पहुँच कर थोड़ा किया यहाँ विश्राम।
दो घंटा सोया, तब ही आया है कुछ आराम।

अब बैठा हूं लिखने, तेरी मां का मैं संचालन।
आज ही पूरा कर पाऊँ मैं, तब कर्तव्य हो पालन।

फिर कल्याण-भारती लिखकर सोमवार को भेजूं।
तब ही कैसेट सुनने का, मैं मन ही मन में सोचूं।

हाँ बिटिया अब काम बहुत है, मिलता है आनन्द।
हर पल मैं लिखता जाऊँ, बस यही सच्चिदानद ॥

बीकानेर, 6-9-1997, बैदों का चौक

उड़ान : एक सपना

बिटिया के नाम यह कविता-पत्र बनते समय मन-मस्तिष्क में शिशु की मुस्कानें और प्रसिद्ध अंग्रेजी उपन्यास ‘जोनाथन लिंग्विस्टन सीगल’ छाया हुआ था। उपन्यास लगभग 7-8 साल पहले पढ रखा था । देह की रुग्णता के कारण नहीं जानता था कि ‘सीगल’ की लम्बी तपस्या इस क्रमिक पत्र में पूरी होगी, किन्तु मरने से पहले मृत्यु स्वीकार नहीं हुई इस साधक को !

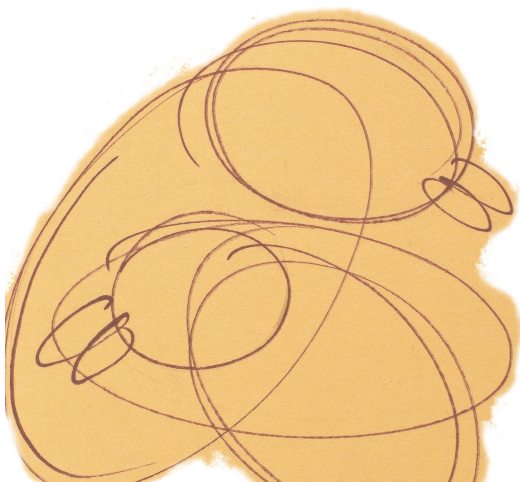

नन्हीं चलो शुरु कर दें हम, एक कहानी लम्बी।
हो सकता है पूरी ना हो, है इतनी बहुरंगी॥

एक नन्हीं सी चिड़िया अपने, परिजन संग रहती थी।
दाना चुगती चीं-चीं करती,इधर-उधर उड़ती थी ।

आसपास के परिवेश को चिड़िया ने जो देखा ।
हुआ उसे अचरज भारी, निज चित में अद्भुत लेखा ॥

चिड़िया के संगी-साथी, बस थोड़ा सा उड़ते थे ।
बस छत की मुड़ेर तक जाकर वापस आ मुड़ते थे ॥

छत की गुम्बद पे बैठी चिड़िया ने ऊपर देखा।
कौवे-चील-कबूतर को ऊँचे ही उड़ते देखा।

मस्त पंख फ़ैलाये ये, इतना ऊँचा उड़ते हैं।
इतना ऊँचा उड़ करके भी, जरा नहीं थकते हैं।

दोस्त से बोली चिड़िया, निज आकाश में ऊँचे देखो।
हम तो यहीं पड़े रहते, वे ऊँचा उड़ते देखो।

चलो चलें हम भी इतना ही ऊँचा उड़के देखें।
कितना अच्छा लगता है, नीचे का मंजर देखें।।

घबरा गई दोस्त उसकी, और बोली बस इतना ही।
हम कैसे उड़ सकती हैं, ये पंख मिला कितना ही?

इतना ऊपर जाने में तो समय लगेगा ज्यादा।
ऊपर भोजन नहीं मिलेगा भूख अलग है बाधा।।

7-9-1997, बैदों का चौक, बीकानेर

अभ्यास

संभवतः तीस कविताओं में 'सीगल' की कहानी भारतीय-पारिवारिक सुगन्ध के साथ बिटिया को भेजे पत्रों में उतरी। आज 17-18 साल बाद ये रचनायें स्वयं रचनाकार को भा रही हैं, संभवतः यह पुस्तकाकार प्रकाशित हो, बेहतर संवाद बनाये और इस साधक से कुछ बेहतर लिखवाये।

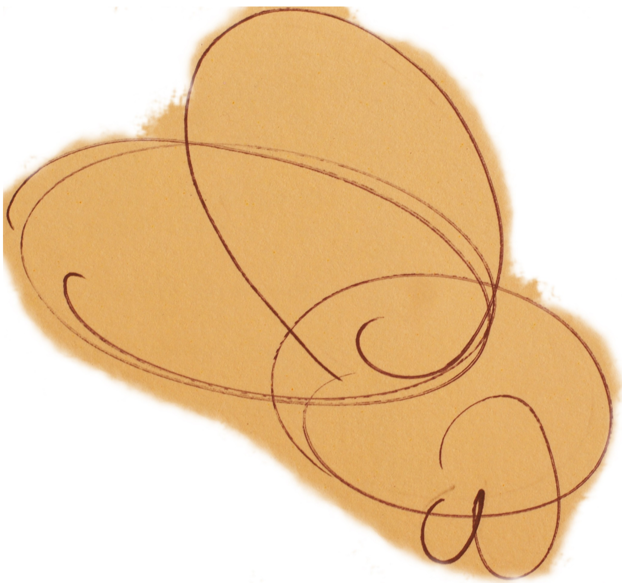

भूख के भय से घबराई, और नीचे उतर के आई।
जल्दी-जल्दी दाना खाया, मस्त हो गई दोस्त!

वह चिड़िया चिन्तन में डूबी, यह कैसा बचपन है।
खाना-जाना-फ़िर खाना बस इतना ही जीवन है।

प्रभु ने पंख दिये हैं हमको, काम है अपना उड़ना।
ऊँचाई आकाश की नापें, यही है करते रहना॥

भले पंख छोटे हैं मेरे, लेकिन किसका डर है?
उड़ना मेरा जन्म-सिद्ध अधिकार जिन्दगी भर है।

चिन्तनपूर्वक मन की बात बताई माँ को जाकर।
ऊँचा उड़ना चाहूँ, रखूँ ना खुद को भरमाकर॥

अपनी छोटी सी बच्ची के,मुँह पर बड़ी ये बात।
खुश हुई पर घबराई, महसूस किया आघात॥

समझाया बेटी को तुम क्यों सपनों में रहती हो।
कैसे कर पाओगी बिटिया, सोचों क्या कहती हो॥

व्यवहारिक बातों से मां ने, समझाया बेटी को।
खाना-पीना-मस्त ही रहना,सिखलाया बेटी को॥

सारी बात समझकर ही, चिड़िया मन ही मन बोली।
कुछ भी कह ले मां लेकिन मैं उडूंगी ऐसा बोली॥

बस चिड़िया ने उस दिन से ही शुरु किया अभ्यास।
नित ऊपर ही ऊपर उड़ती भाया यह आकाश॥

बैदों का चौक, बीकानेर 8-9-1997

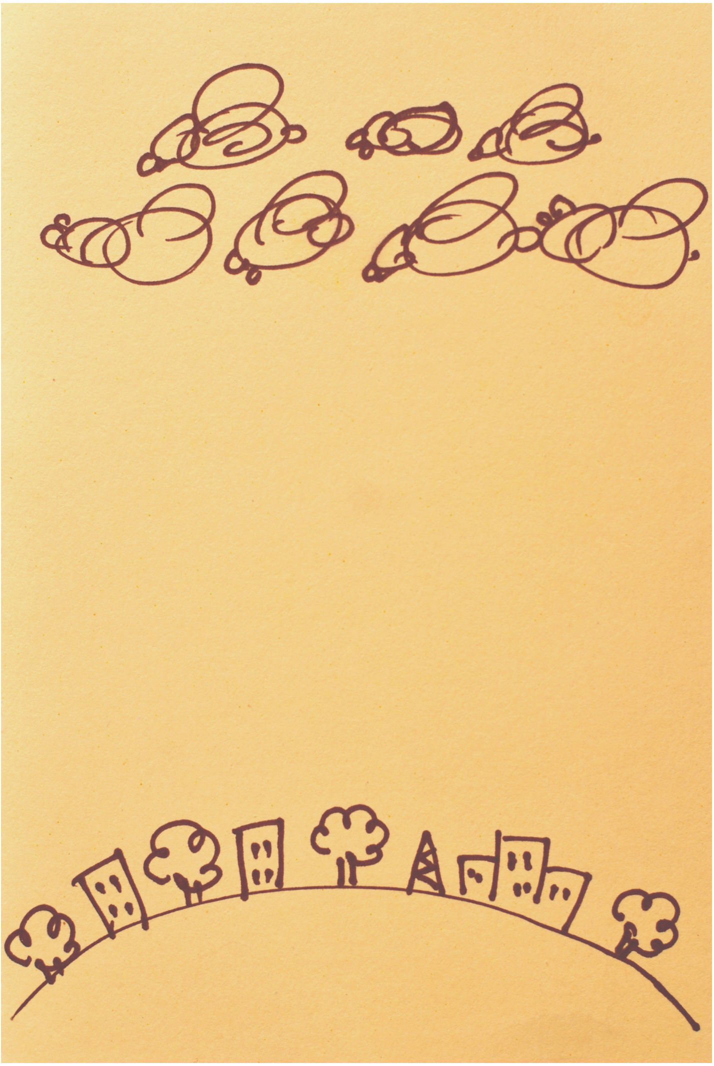

जोर अपना ही

कहानी साथ-साथ फ़ेस-बुक पर भी पोस्ट हो रही है, गुणी मित्रों के साथ अद्भुत संवाद बन रहा है। अब दोपहर हुआ चाहती है, भोजनार्थ विराम लेता हूं। प्रणाम!

ऊँचा उड़ने का निश्चय, चिड़िया को ऐसा भाया।
कल प्रातः नभ को नापूंगी, मन में ऐसा आया॥

खा लूं भर के पेट वहाँ तो समय लगेगा काफी।
यही सोच कर रात में उसने खाया कुछ ज्यादा ही॥

गलती कर दी ज्यादा खाकर, सुबह देर से जागी।
आलस आया उठकर सीधा, पाखाने को भागी॥

समझ गई ज्यादा खाने से, शरीर होता भारी।
पंखों की ताकत घटती, हो उड़ने में लाचारी॥

दिन भर सुस्त रही, पेड़ पे बैठी रही वो चिड़िया।
नभ में ऊँचा उड़ना चाहे, अब भी प्यारी चिड़िया॥

गुणी दोस्त से हाल बताया, तन का ,मन का उसने।
ऊँचा उड़ने के थोड़े कुछ गुण भी सीखे उसने॥

हल्का-फुल्का खान-पान हो, और शरीर हो स्वस्थ।
यदि ऊँचा उठना चाहो तो, खुद को रखो व्यस्त॥

हफ़्ते भर में स्वास्थ्य संभाला, मन को पूरा साधा ।
एक सुबह उड़ गई लगाकर, जोर बिना कुछ बाधा॥

बैदों का चौक, बीकानेर 9-9-1997

जान का खतरा

कभी स्कूली बच्चों के बीच 'सीगल' की लम्बी कहानी कही है मैंने। बच्चों के साथ गुरुजन-अभिभावक भी बड़े गौर से सुना करते थे। सीगल का कोई भारतीय नामकरण भी हुआ था, अब भूल गया हूँ। तब बिटिया को यह कवितायें बहुत पसन्द आई, आज तो वह खुद बहुत बेहतर लिखती है।

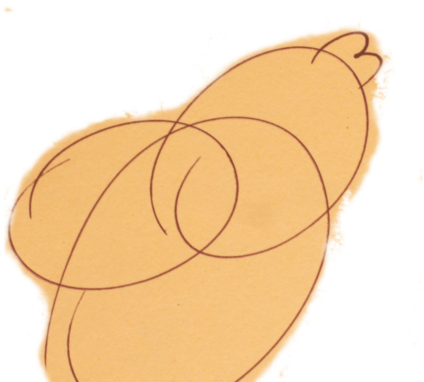

छत से ऊँचा उड़कर वह मन ही मन झूम के बोली।
अब जल्दी से कौवों को छू लूंगी, खुद को तोली।

और लगाया जोर पंख का, रोक के अपनी सांस।
ऊपर उड़ते थे कौवे, झट पहुँची उनके पास॥

कौवे चौंके यह छोटी सी चिड़िया कैसे आई?
कल तक नीचे उड़ती थी, कैसे इतना उठ पाई?

अचरज से देखा वह थी थककर के इतना चूर ।
छोटा है कद पर खुद को, वह समझ रही है शूर ।

हँसने लगे देखकर कौवे, चिड़िया यह नन्हीं सी ।
पहली बार इतना ऊँचा आई यह उड़न परी सी ॥

चलो सभी हम करें मदद, इसको दें जरा सहारा।
अपनी पीठ पे बिठला के, दिखला दें भव्य नजारा।।

इक कौवे ने पास आकर के, प्यार से उसे निहारा।
बस वह गिरने ही वाली है, उसने सहज स्वीकारा।।

झट से कौवे ने चिड़िया को, बढके दिया सहारा।
अपनी पीठ पे बैठाया, भय भागा उसका सारा।।

जान बची नन्हीं चिड़िया की आंखें हो गई बन्द।
सांस में सांस आई उसके, अब तक थी जो स्वच्छन्द।।

इस ऊँचाई पर जो ठंडी हवा चल रही भारी।
कुछ ही देर में आंख खुली, वह घबराई बेचारी।

नीचे देखा चिड़िया ने, सिर घूमा आया चक्कर।
हाय अगर मैं गिर जाती, तो बनता मेरा कचूमर।।

अच्छा तो लगता है लेकिन, खतरा इसमें पूरा।
इतना ऊँचा उड़ने में तो जान का खतरा पूरा।।

बीकानेर, बैदों का चौक; 10-9-1997

मेंढकी को जुकाम

नन्हीं सुप्रिया के बारे में उन दिनों कोई कल्पना भी नहीं बनती कि वह इतना ऊँचा आकाश मापेगी। न ही कभी कोई दावा उसके मुँह से सुना गया। गत 17-18 वर्षों ने उसने विभिन्न आयामों में कई ऊँची उड़ाने सहजता से भरी हैं। पुस्तक-लेखन, भाषण, सम्पादन, फिल्म-निर्माण, नृत्य-संयोजना, प्रसिद्ध व्यक्तियों से सहज संवाद ... अब तो उसके विरोधी (?) भी मानते हैं कि वह कुछ भी कर सकती है; बस, वही नहीं मानती!

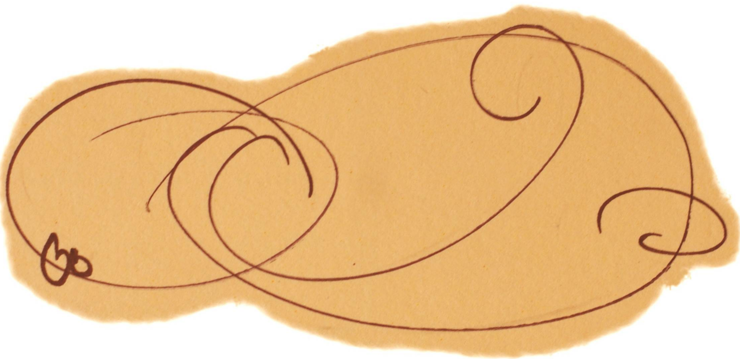

कौवे ने भी समझाया, क्या हाल है चिड़िया रानी?
क्यों आई हो इतना ऊपर, क्यों इतनी नादानी॥

नीचे तो सब मिलता है, तुमको अपना प्राप्तव्य।
अब तक तो ना देखा तुमको, क्या तेरा गन्तव्य?

चिड़िया बोली कौवे काका, तुम्हें बताती बात।
मेरे मन में तुमसे ऊँचा उड़ने की जज्बात॥

मैं भी पक्षी तुम भी पक्षी, फिर ये भेदभाव क्यों?
तुम इतना ऊँचा उड़ते, फिर मैं इतना नीचे क्यों?

मेरे मन में भी नभ में, ऊँचा उड़ने की चाह।
इसीलिये पकड़ी है काका, मैंने तेरी राह।

सुनकर उसकी बात सभी कौवे ठट्ठाकर हंसते।
हुआ जुकाम मेंढकी को, ऐसा कह बहुत विहंसते॥

छोड़ दिया उस कौवे ने और बहुत जोर से डांटा।
खबरदार फिर मत आना, 'वरना मारुँगा' चाँटा।

छोटा कद रख करके, चिड़िया कभी न ऊँचा उड़ना।
बहुत ही बेजा बात, है चिड़िया ध्यान से इसको सुनना॥

बैदों का चौक, बीकानेर, 11-9-1997

बाधक परम्परा

यह 'नन्हीं' वास्तव में सुप्रिया स्वयं है। चिड़िया सी चहकती मीठी आवाज, चिड़िया सा सुन्दर चेहरा और चिड़िया सा खाना-पीना। उन दिनों नृत्य-कक्षायें शुरु ही की थी। घर आकर जब-तब नृत्य-मुद्रायें बनाती, पांव थिरकाती, मुस्कुराती, हंसाती, खिलखिलाती, सबको खुशियों के झूले में झुलाती सुप्रिया अपने स्कूल और अन्य मंचीय आयोजनों से प्रति सप्ताह मेडल लेकर आती। वर्षों तक पीतल के उन मेडलों को चमकाने का सौभाग्य लिया है इस साधक ने! फिर बढती सँख्या संभाले नहीं संभली तो एक दिन तराजू में वजन करके कबाड़ी को बेच दिये!!!

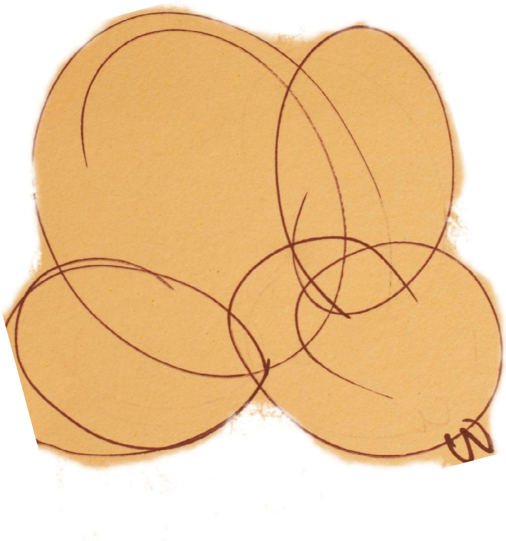

उस ऊँचे आकाश से नन्हीं चिड़िया नीचे आई।
मन में उसके खुशी भरी, चित में मायूसी छाई।

उस चिड़िया के परिजन सारे चिन्ता में डूबे थे।
कहाँ गई, क्यों गई, यही बातें सारे करते थे॥

आते ही सबने घेरा, उस नन्हीं सी चिड़िया को।
चलो हम सभी 'नन्हीं' नाम ही देते इस चिड़िया को॥

नन्हीं को सब लगे पूछने, घबरा कर यह बात।
इतनी देर कहाँ थी बोलो, समझाओ हालात॥

झूम के नन्हीं चहक उठी, बाबा बस कुछ पूछो मत।
"मैं इतना ऊँचा उड़कर लौटी हूं" सुन लो हालत॥

उस कौवे की पीठ पे बैठी, आकाशों में घूमी।
काले ठंडे बादल देखे, और मस्ती में झूमी॥

आँखे फाड़े देख रहे सब, हैरत से सुनते हैं।
नन्हीं जो बोले सारे जन सांस रोक गुनते हैं॥

पहले तो सोचा कि नन्हीं पगला गई है पूरी ।
उल्टी-सीधी झूठ बात, सच से लगती है दूरी ॥

फिर आये कुछ गुणी-सयाने, नन्हीं को समझाने।
परम्परा यह नहीं है अपनी,इतनी बात बताने।

अपना कुल तो बस उड़ने का केवल करता नाम।
खाना-पीना और सो जाना, ही बस अपना काम॥

कौवों की पंगत में जाना उचित नहीं है बेटी।
चीर-फाड़ के खा जायेंगे, तुमको कौवे बेटी॥

इतना ऊँचा उड़ने का कारण भी कोई ना है।
अपनी सभी जरुरत नीचे, प्रभु पूरी करता है ॥

बैदों का चौक, बीकानेर; 12-9-1997

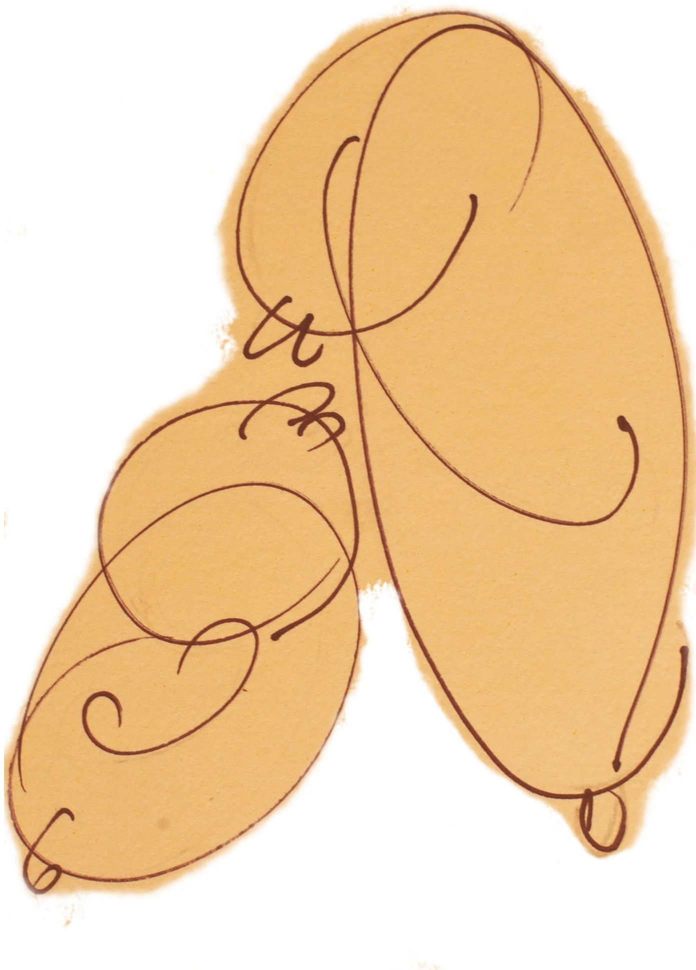

ऊँची उड़ान

नन्हीं सुप्रिया के मार्ग में बाधाओं का दूसरा प्रकार था। उसे चारों तरफ से लगातार-धुंआधार प्रशंसा मिल रही थी। तारीफ़ों का अतिरेक भी तो अजीर्ण पैदा करता है, प्रगति में बाधक बनता है! नन्हीं चिड़िया को रोका-टोका गया, वह नहीं मानी; सुप्रिया ने तारीफ़ों को बाधा नहीं बनने दिया। उड़ान दोनों की समान चल रही है! ये दो हैं या एक ?

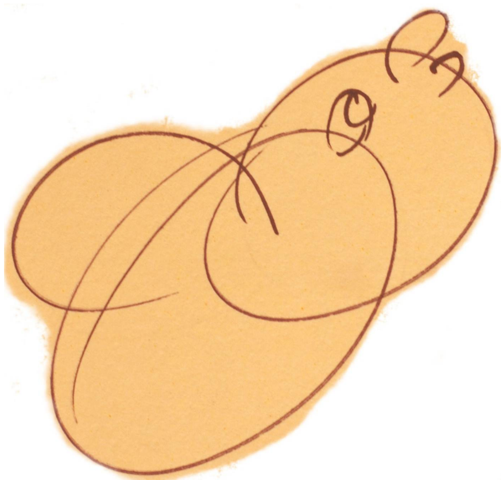

नन्हीं चिड़िया पड़ी रही, दो दिन ऐसे ही अविचल।
सारी बातें सोच रही, मन में भी बिल्कुल निश्चल॥

उसने अनुभव किया है, नभ में ऊँचा उड़कर जाना।
जीवन सार्थक भी लगता ऊँचा उठकर पहचाना॥

लेकिन सारे परिजन तो मुझको ही रोक रहे हैं।
कहते हैं मेरे ही हित में है जो टोक रहे हैं॥

ऊँचा उड़ने की कठिनाई बता रहे हैं सच्चे।
और नीचे रहने के सुख भी गिना रहे हैं अच्छे॥

दुविधा है नन्हीं के मन में, क्या आगे करना है।
क्या छोड़ूं अपना प्रयास, या पग आगे धरना है?

अगर छोड़ दूं तो सारे खुश हो जायेंगे परिजन।
लेकिन छोड़ूं उड़ना तो बुझ ही जाये मेरा मन।।

नई राह जो पाई है, वह बन्द यहीं हो जाये।
ऊपर उठने की चाहत मन ही मन में मर जाये।।

साहस और खोज-वृत्ति को शेष ही करना होगा।
यह तो ऐसा है जैसे जीते जी मरना होगा।।

नहीं रुकूंगी मैं आधे में आगे ही बढ़ना है।
चाहे जो हो जाये मुझको ऊँचा ही उठना है।

पंख दिये हैं प्रभु ने मुझको मैं ना यूं मानूंगी।
नभ की ऊँचाई को, खुद से नाप के ही जानूंगी।।

बैदों का चौक, बीकानेर; 13-9-1997

मरम्मत

ऊँचे उड़ने वालों के पथ में अनजानी-अनचाही बाधायें आती हैं। मरम्मत करने वाले कौवे ऊपर आकाश में भी हैं, नीचे धरती पर भी! नन्हीं घायल हुई, तिलमिलाई; पर नहीं घबराई! बाधायें कितना भी आये-सताये-रुलाये-बहकाये, मगर उड़ने का हौसला तोड़ न पाये!

बैदों का चौक, बीकानेर; 14-9-1997

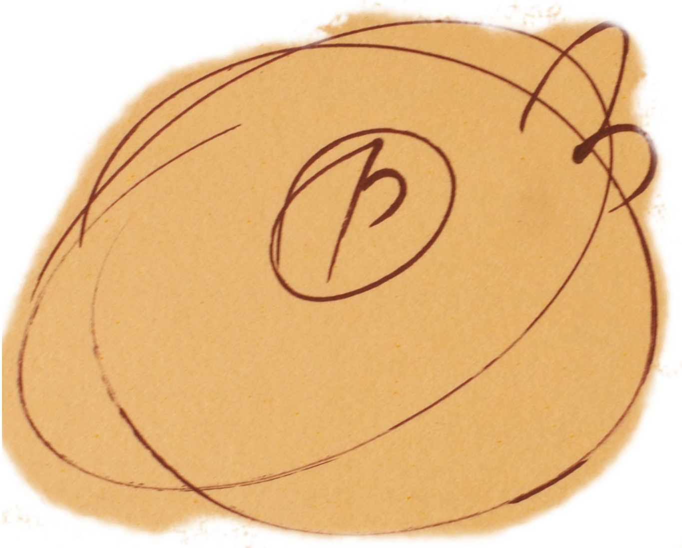

मन में निश्चय करके,नन्हीं ने तैयारी कर ली।
मित खाया, हितकर खाया, तन-मन में फुर्ती भर ली।।

इक प्रातः मौसम अनुकूल देखकर नन्हीं उड़ ली।
नहीं किसी से बोली कुछ, बस अम्बर मार्ग पकड़ ली।।

सधा हुआ था तन-मन, नन्हीं शीघ्र ही पहुँची ऊपर।
कौवे उड़ते हैं अक्सर, पहुँची उस स्तर पर।

देखा जो उस कौवे ने, फिर से नन्हीं आई है।
पहले दिन तो थकी-थकी थी, अब वो हर्षाई है।।

आज जरुरत नहीं मदद की, थकी हुई ना लगती।
यह तो हमसे बराबरी, करती सी अब तो दिखती।

गुस्सा आया कौवे को, इतनी हिम्मत है इसकी।
टूट पड़ा नन्हीं पर कौवा, करी मरम्मत उसकी।।

बैदों का चौक, बीकानेर; 14-9-1997

अटूट विश्वास

बना रहे विश्वास, तो हर बाधा अवसर बन जाती है; हर चुनौती आगे बढने का हौसला देती है। नन्हीं अपनी बाधाओं को तोलकर, अपने पंखों में नया जोश भरती है। नया सोचती है, नया करती है। आकाश बहुत विस्तृत है, कौवे कहाँ-कहाँ पहुंचेंगे? और सहायक शक्तियां भी तो इन्तजार करती है दुःसाहसी साधकों का!

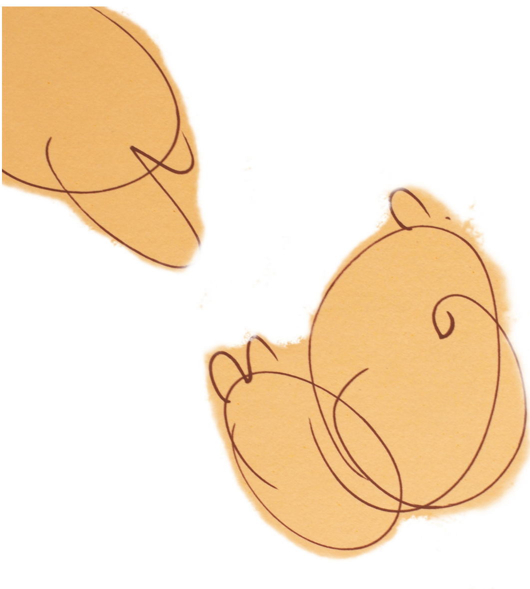

कौवे के सामने भला, नन्हीं कैसे टिक पाती?
सोचा था सहयोग मिलेगा, और बढेगी ख्याति।

लेकिन उसको कहां पता है, दुनियां का दस्तूर।
ऊपर उठते को दुनियां नीचे खींचती जरुर॥

पर्वत पर चढना हो तो, सांसे तो फूलेगी ही।
गुरुत्वाकर्षण की शक्ति, नीचे तो खींचेगी ही॥

कोई बड़ा कहाँ माने, छोटा ऊँचे उठ जाये?
इससे उनके अहंकार पर चोट बड़ी सी आये।

काले कौवों ने नन्हीं सी, चिड़िया को झिंझोड़ा।
घायल करके पंखों को, धरती तक लाकर छोड़ा।

तन घायल है लेकिन मन का ना टूटा विश्वास्।
पुनः उड़ेगी नन्हीं ऊपर, रखना यह अहसास।

बैदों का चौक, बीकानेर; 15-9-1997

फिर जीती नन्हीं

इन दिनों मुझे अपनी सहधर्मिणी से संवाद मिलते कि सुप्रिया को ये पत्र अच्छे तो बहुत लगते हैं, किन्तु उसे अपने नृत्याभ्यास से खाने का अवकाश भी नहीं मिलता! थककर चूर होती है, मगर नृत्य नहीं छोड़ती! नृत्य उसका पहला प्यार है। और वह इस प्यार में गिरी नहीं, बल्कि ऊँचे उठी है। अंग्रेजी में कहें तो – 'नॉट फॉलन इन लव, बट राइजन।' नन्हीं भी ऊपर से नीचे गिरी नहीं, सांस रोककर मरी नहीं; बल्कि ऊपर उठी, अमरता को पाने आगे बढ गई!

घायल तन है लेकिन मन मजबूत हो गया इतना।
दो ही दिन में फिर उड़ान भरने का साहस जितना।।

सोच-समझ कर नन्हीं ने अपनी रणनीति बनाई।
कौवे चीलों से बचने की युक्ति खूब लगाई।।

दिशा बदलकर राह बदलकर, नन्हीं करे कमाल।
एक बार फिर उड़ी जोर से सुनलो उसके हाल।

ऊँचे, ऊँचे और भी ऊँचे, नभ में उड़ती जाये।
कौवे-चील सभी को वह नीचे ही छोड़ती जाये।।

अब तो उस तक पहुँच सके, ना दुश्मन उसका कोई।
छुपी बादलों के पीछे, ना देखे उसको कोई।।

इतना जोर लगाया, उसके पंख थके इस श्रम से।
भूख लग गई उसे जोर की, फूल गई वह दम से।।

सोचा अब यदि नीचे जाऊँ, मुश्किल होगी ज्यादा।
कौवे खड़े राह में तंग करेंगे मुझको ज्यादा ।।

इतने में नन्हीं के दिल में आया नेक विचार।
सांस रोक मुर्दा बन जाऊँ, होना आर या पार।।

धरती तक आते-आते फिर नन्हीं संभल गई है।
सही-सलामत अपने घर-आँगन में पहुँच गई है।।

बैदों का चौक, बीकानेर; 16-9-1997

नई राहों पर

तलाशनी है नन्हीं को नई राहें! न कोई निराशा न ही कोई उलझन! बस आगे बढना है नन्हीं को। ऊँचा उड़ना है नन्हीं को! ऊँचे - और ऊँचे – ऊँचे से ऊँचे! शुभ कामनायें नन्हीं के लिये। अब

खुश है नन्हीं मन ही मन में देखो इतनी ज्यादा।
पर ना बतलाती परिजन को अपना नेक इरादा।।

आकाशों की ऊँचाई को वह तो नाप आई है।
नहीं किसी से हुआ, काम वो ऐसा कर आई है।।

अब नन्हीं की खुशियां नहीं समाती उसके मन में।
छलक-छलक सबको बतलाती अकसर निजी नयन में।

अपनी एक सखी को यह भी चुपके से बतलाया।
कितना सुख है ऊँचाई पर विस्तृत यह समझाया।।

लेकिन हा! दुर्भाग्य समझ ना पाई वो भी पूरा।
रोक रही नन्हीं को, यूं करने छोड़ अधूरा।।

दुःख हुआ नन्हीं को, लेकिन रुकी नहीं वह बिल्कुल।
पुनः दूसरे दिन उड़ने को निकल पड़ी वह अविचल।।

फिर से शुरु हुई, दीर्घ रोमाँचक यात्रा।
दुष्ट पक्षियों से बचकर, उड़ने की यात्रा।।

दूर बादलों में साहस से विचरण करती।
नये-नये मार्गों पर नन्हीं उड़ती फिरती।।

बैदों का चौक, बीकानेर; 17-9-1997

रुकी सी कहानी

नन्हीं चिड़िया के साथ यह साधक भी अनेक आयामों में उड़ने की साधना में है। शरीर की रुग्णता सबकी जानी-मानी-पहचानी है, सो इसे स्वस्थ करने का जिम्मा बहन सरोज और सिपानी परिवार के एक-एक सदस्य ने थाम लिया है; यह साधक अपना लेखन मोर्चा सम्भाले हैं। बीकानेर में दो सप्ताह मात्र हुये, काफ़ी कुछ लिखा-सुना-जाना। छः तारीख का निश्चय दो ही दिन में पूरा हुआ, फिर कुमारसभा पुस्तकालय से प्राप्त गीता-कैसेटों को सुन-सुन कर लिखना शुरु हुआ। आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री के गीता-प्रवचनों के श्रवण-चिन्तन-मनन-लेखन का सौभाग्य संचित पुण्यों का फल है, खूब आनन्द लिया। संभवतः पचासेक कैसेट, सवा-डेढ घंटे की प्रत्येक; तीन बड़े रजिस्टर बन गये। रचनाओं के साथ रचनाकार घुल-मिल गया लगता है!

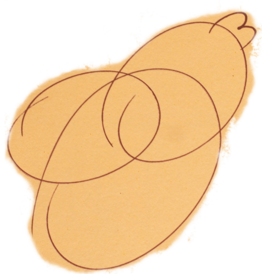

इस उड़ान में नन्हीं पूरा जोर लगाती।
गिर ना जाये इस भय से वह पंख चलाती॥

भारी श्रम से थक जाया करती थी नन्हीं।
बहुत देर तक भूखी रह जाती है नन्हीं॥

ऊपर-नीचे आते-जाते भय लगता है।
चील और कौवे खा जायेंगे, श्रम जगता है॥

श्रम-भूख और भय से नन्हीं दुर्बल हो गई।
अब उसकी उड़ने की शक्ति निर्बल हो गई॥

बहुत दिनों तक यात्रा का आनन्द लिया है।
नये-नये रस्तों से उड़कर देख लिया है॥

ऊँचाई पर जाकर अपना सांस रोकना।
मरी देह की तरह, ऊपर से नीचे गिरना॥

धरती पर आने से पहले, सधी हुई सी।
पंख खोल धीरे से उतरे, वह उड़ती सी॥

इस करतब में दक्ष हो गई नन्हीं अपनी।
अब बोलो क्या हो आगे कहानी अपनी?

बैदों का चौक, बीकानेर; 18-9-1997

कहानी फिर शुरु

फोन किया कोलकाता, उठाया बिटिया ने! काफ़ी है इतना; अब कहानी आगे बढ ही जानी है। उसने बीकानेर आने का प्रस्ताव भी सहर्ष स्वीकारा; नहीं भी आ पाये, कहानी तो आगे बढ ही जानी है। इस साधक के साथ ऐसा बार-बार होता है। सारी आशंकाओं को झुठला कर देह-यात्रा जारी है। चालीस साल से गीता पर लेखन चला, अनपेक्षित रुप से पहला अध्याय अब छप रहा है। 'औसान' उपन्यास गत पांच वर्षों से अटका पड़ा था, अब खुल गया रास्ता। 'औसान' मन-मस्तिष्क पर हावी है, फ़िर भी यह पुस्तक पहले प्रकाशित होना चाहती है! जाने नन्हीं की कहानी आगे क्या मोड़ ले!

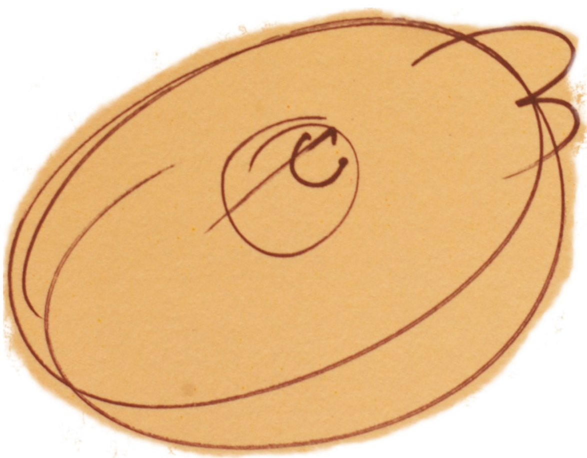

वह मीठी आवाज पड़ी फिर से कानों में।
जैसे अमृत घोल दिया नव-पैमानों में ॥

प्रातःकाल ही घंटी सुनकर फोन उठाना।
बना मेरा सौभाग्य, तेरे हाथों में आना॥

सुन मेरी आवाज, तेरा खुश होकर कहना।
'पापा' के दो हर्फ़ तेरा हर्षाकर कहना॥

बस यूं लगा कहानी तुमको पसन्द आई।
जैसे नन्हीं चिड़िया ने आवाज लगाई॥

ठहरी हुई कहानी आगे बढ जायेगी।
शेष होने तक बीकानेर तू पहुँच जायेगी॥

कहना यह चिट्ठी तुमको किस दिन मिलती है?
पोस्ट-ऑफिस के कर्मों की चूलें हिलती है।

अगर समय पर पोस्टमेन यह दे जायेगा।
नाम तुम्हारा याद उसे भी रह जायेगा॥

नन्हीं चिड़िया को अब कोई दोस्त मिलेगा।
अब से उसका जीवन-क्रम सारा बदलेगा॥

बैदों का चौक, बीकानेर; 19-9-1997

फ़िर प्रथम

नन्हीं छा गई। 'सीगल' का यह भारतीय-पारिवारिक संस्करण रास आया अनेक जन को। सत्रह वर्ष बाद फ़ेस-बुक पर आज उतरी रचनायें बीसीयों मित्रों ने सराही हैं। इस पुस्तक में तत्कालीन अनेक सन्दर्भ सचित्र जोड़ना है, और कुछ कलात्मक चित्र नये भी बनवा कर बालोपयोगी बना कर प्रकाशित करने का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। सब अद्भुत! आशा है आज ही सारी पत्रावली पूरी हो जायेगी।

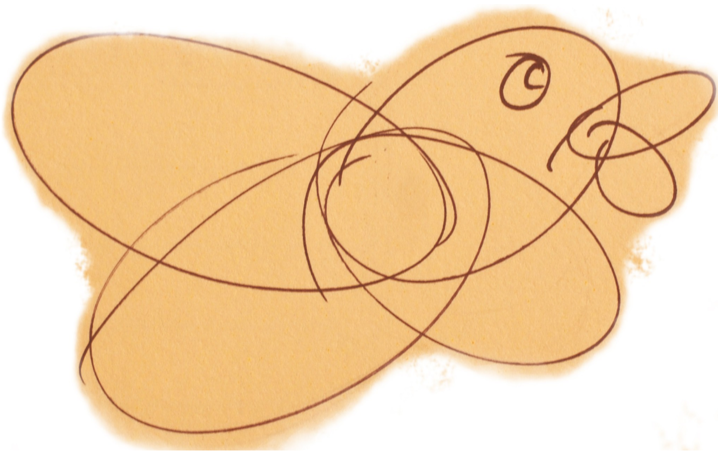

सहज हुआ मैं बीकानेर में, नित्य लिखूंगा।
तीस तारीख तक नित्य मिले, ऐसे लिखूंगा।।

तेईस तारीख बाद पोस्ट ना करना तुमको।
तब तक लिखे पत्र, सभी मिल जायें तुमको।।

प्रथम स्थान रहा, महाराज के सामने तेरा।
गर्व से मस्तक सदा किया ऊँचा ही मेरा।।

प्रभु ने तुमको इतनी प्रतिभा दी है बेटी।
सबका प्यार सहज पाओगी प्यारी बेटी।।

गर्व न करना मन में, और आगे जाना है।
ऊँचा है आकाश, तुम्हें उड़ते जाना है।

चलो शुरु करते हैं, बात नन्हीं की फिर से।
नया मोड़ आ जाए, सहज कथा में फ़िर से।।

बीकानेर, 20-9-1997

नन्हीं से आगे

हाँ, नन्हीं से आगे है कोई। साधक से आगे है कोई। है और हमेशा रहेगा कोई आगे। आगे होने की होड़ थका तो सकती है, जिता नहीं सकती। जीवन कोई जुआ नहीं, जहाँ जीत-हार होती हो; जीवनजीत, जीत और फ़िर जीत का सुहाना सफ़र है। यह बात साधक ने इस रचना के लगभग ग्यारह वर्ष बाद जीवनविद्या अध्ययन में जानी। अर्थात यह रचना मेरे अनजाने उतर आई! अर्थात इसे मैंने नहीं लिखा, बल्कि प्रकारान्तर से इसीने मुझे रचा! ओह, यह कैसी पहेली है?

एक दिवस की बात सुनो, नन्हीं उड़ती थी।
बादल से भी ऊँचे अम्बर में दिखती थी।।

चौंक गई नन्हीं, जो अपने आगे देखा।
एक और चिड़िया को उसने उड़ते देखा।।

इतनी ऊँचाई पर भी आराम से उड़ती।
जैसे वह पंखों से कोई काम न लेती।।

बिन प्रयास ही जैसे वह उड़ती जाती है।
बिना थके नन्हीं से ऊँचे उड़ पाती है।।

चौंक पड़ी नन्हीं यह कैसा स्वप्न देखती है वो।
उसी समय पंखों को रोका, गिरने लगी तभी वो।।

वह चिड़िया नन्हीं के पास आई झट से।
दिया सहारा बचा लिया गिरने से झट से।।

संयत करके नन्हीं को, उसने सहलाया।
उसके जैसी ही वह भी है, यह समझाया ।।

वर्षों तक उसने भी यह अभ्यास किया था।
फिर ऐसे ही उसको इक दिन संग मिला था।।

बीकानेर,20-9-1997

टूटते परम्परा-बन्धन

परम्परा कहती है कि हर रचना का कोई रचनाकार होता है। रचनाकार का कद रचना की तुलना में बड़ा होता है। व्यापक स्वीकृति है इस समीकरण के लिये। किन्तु यहां तो कुछ उल्टा ही दिखता है! यहां रचना अपने रचनाकार से आगे चल रही है; रचनाकार को गढ रही है अपने अनुकूल! रचना पहले, रचनाकार बाद में! और रचनाकार साधक कृतज्ञ हो रहा इस प्रक्रिया का! अब नीचे आना कठिन है।

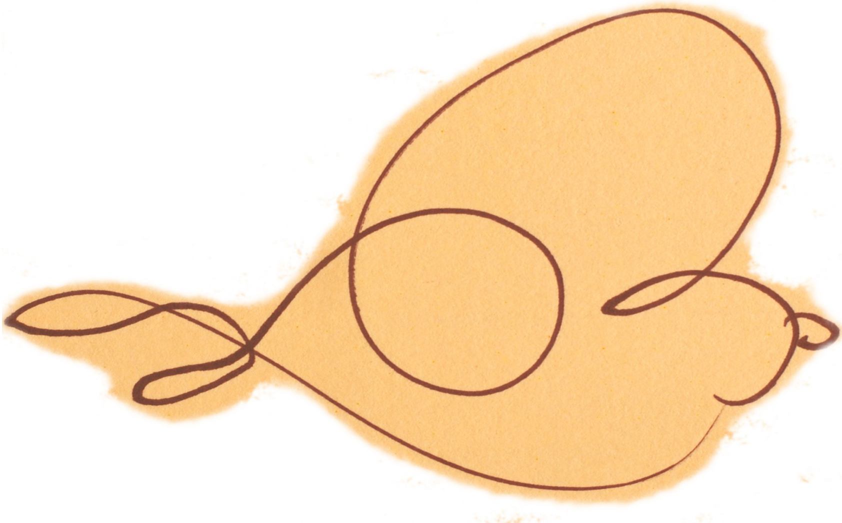

अब उसका नीचे जाने का काम कठिन है।
ऊपर से इस ऊँचाई तक जाना कम है॥

ऊपर चलो सैकड़ों साथी तुम्हें मिलेंगे।
बिन प्रयास ही उड़ते सारे वहाँ दिखेंगे ॥

गुरु चिड़िया ने नन्हीं को फ़िर गुर बतलाया।
बिन पंखों को खोले ही उड़ना सिखलाया॥

इक पल में ही नन्हीं विद्या सीख गई थी ।
गुरु के संग उड़ने की शिक्षा नई-नई थी ॥

गुरु ने अपने मित्रों से परिचय करवाया।
वर्षों पहले धरती पर थे, यह बतलाया॥

अपने कुल की परम्परा तोड़ी थी सबने।
नन्हीं की ही तरह राह ये पाई सबने॥

सब नन्हीं से नीचे का थे हाल पूछते ।
कैसी हैं सब चिड़ियायें, बतलाओ कहते ॥

तब नन्हीं ने देखा सूरज डूब चुका है ।
कैसे जाऊँ नीचे,अँधियारा पसरा है ॥

बीकानेर, 21-9-1997

अनजानी डगर पर

नन्हीं और साधक साथ-साथ चलते हैं, साथ-साथ आगे बढते हैं। मार्ग की कठिनाईयों को साथ-साथ जी-झेल रहे हैं। जिसे सम्बोधित करके पत्र लिखे गये, वह बिटिया अब सन्दर्भ से दूर होती लगती है। जीवन-यात्रा में उसकी राहें जुदा होती सी लगती है। रचना अपने रचनाकार को पुनः सजाने-संवारने --आगे बढ़ाने को प्रस्तुत है। साधना की यह डगर अनजानी है। आगे बढ़ने के सिवा अन्य कोई रास्ता सूझता नहीं ! कोई विकल्प नहीं।

रात हुई अब नन्हीं बहुत लगी घबराने।
अब घर को कैसे जायेगी, प्रभु ही जाने॥

गुरु चिड़िया ने देखा उसे तो वह मुस्काई।
अब नीचे जाने की बात, क्यूं मन में आई?

दोस्त हैं हम सब, यहीं रहो, भय कैसा बोलो।
और करो अभ्यास, उड़ो, हम जैसा खेलो॥

यहां रात और दिन का कोई भेद नहीं है।
बस उड़ते ही रहना है, कोई खेद नहीं है॥

उड़ते रहना ही हम सबका एक कर्म है।
खाना-पीना नहीं, न कोई और मर्म है॥

उड़ना है आनन्द हमारा, और जीवन है।
ऊँचे उड़ना नन्हीं अब जीवन-दर्शन है।

इस ऊँचाई से आगे अपनी मंजिल है।
बतलाते हैं पुरखे उड़ना ही मंजिल है॥

छोड़ो अब नीचे की बातें भूल ही जाओ।
ऊपर उठना है तुमको, उड़ते ही जाओ॥

बीकानेर 22-9-1997

अतीत की यादें

बेतरतीब यादों का बवण्डर अस्त-व्यस्त कर देता है साधक को, तभी ऐसी बेढब रचना उतरती है कलम से। घड़े की गोलाई बता देती है कि इसे बनाते समय कुम्हार का हाथ फिसला है, और कविता की चाल बता देती है कवि के भटकते-अटकते मन की कहानी। अब आगे की राह कैसी बनती है, आगे-आगे देखा जाये।

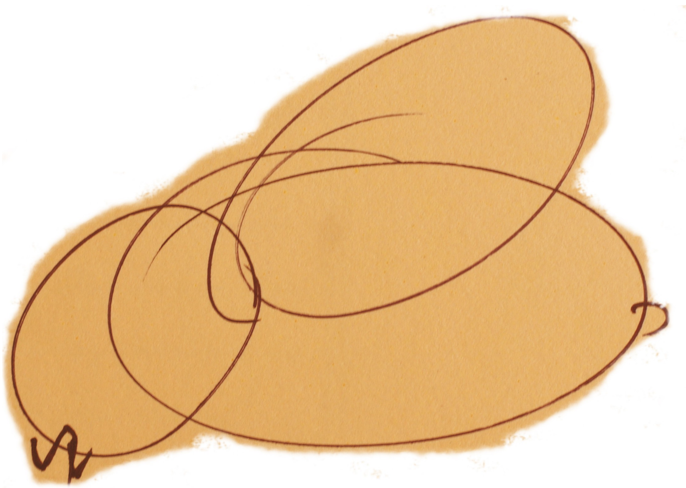

अब तो नन्हीं का जीवन-क्रम बदल गया है।
खाना-पीना-सोना-जगना नित्य नया है॥

धरती पर वह लौट न पाये एक बार भी।
परिजनों से मिल ना पाये तनिक जरा भी ॥

ऊपर ही आकाश में वह उड़ती रहती है।
नये दोस्त हैं, उनके संग बातें करती है।

बोर हमेशा जैसे धरती पर होती थी।
वैसे ही आकाश में अब आपा खोती थी ॥

नीचे गिरने का तो कोई भय नहीं है।
बिना पंख फ़ैलाये वह उड़ती रहती है॥

सुन लो बिटिया इस दुनियां का हाल यही है।
जो धरती पर थे, अम्बर में सदा वही है ॥

इक दिन गुरु चिड़िया ने आकर डाँट पिलाई।
क्यों दिनभर उदास रहती हो बनी पराई॥

नन्हीं बोली याद मुझे घर की आती है।
उनको देखे बिन शान्ति न मुझे आती है॥

बीकानेर 22-9-1997

रिश्तों का सच!

बीकानेर ने इस देह की खूब सेवा की, फलस्वरुप अब तक बची है। जागृति-क्रम में देह प्रयोजनीय है, सिपानी परिवार का उपकार है। गत 17-18 वर्षों में पारिवारिक रिश्तों की कलाबाजियां देखी। हर रिश्ता भ्रमित, हर अपना श्रमित-थकित। नन्हीं की देह छूट गई, रिश्तेदार अपनी-अपनी राहों पर व्यस्त! बेहतर होता कि देह रहते सम्बन्ध-विहीन रिश्तों का खुलासा हो जाये। नन्हीं देहान्तर अवस्था में हैं; देह-मुक्त जीवन अधिक स्पष्ट देख पाता है। तब यह कविता बिटिया की कल्पनाओं में भिन्न फ़ंताशियां उपजाती रहीं; अब उसकी सूचनाओं का संसार व्यापक हुआ है। कुछ आयामों में इस साधक से बेहतर जानती-मानती है। हम अब नन्हीं की यात्रा को थोड़ा और देखते हैं।

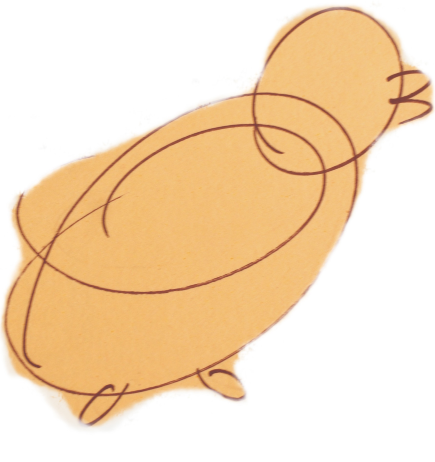

हो सकता है वे सब मुझको भूल गई हों।
या फिर मेरे नाम की वे निन्दा करती हों ।।

कम से कम मेरी मां याद कर रही होगी।
नाम मेरा ले ले कर नित ही रोती होगी।।

गुरु चिड़िया ने सोचा यूं ही ना मानेगी।
इसको मिलवा दें परिजन से तब जानेगी।।

बुद्धू है यह नहीं जानती सच्चाई को।।
चलो इसे दिखलाऊँ सच की परछाई को ।।

बोली मूंदो आँख, लगाओ ध्यान जरा सा।
देखो खड़ा सामने यह परिवार तुम्हारा।।

माँ--बाबा और भाई-बहन सभी को देखा।
नन्हीं ने अपना परिवार दोबारा देखा।।

देखा कि सब कुछ वैसा का वैसा ही है।
कुछ भी तो ना बदला सब पहले जैसा है।।

प्रिय सहेली को भी पास में जाकर देखा।
व्यस्त थी शायद नन्हीं को उसने ना देखा।।

बीकानेर 24-9-1997

शेष कथा

नन्हीं मान रही है, उसका लोक दूसरा।
देख सकें ना उसके परिजन नूतन चेहरा ॥

ये सब अब भी खान-पान तक केवल अटके ।
उड़ने की कोई चाह नहीं, धरती में सिमटे॥

छूट गया है अब मेरा यह मोह ठिकाना ।
नये दोस्तों के संग अब है मुझे निभाना ॥

उनके ही संग दौड़ूं, ऊँचाई को छू लूं।
कोशिश करके और अधिक भी शीघ्र ही पा लूं॥

ऐसा सोच के आँखे खोली गुरु को देखा।
ऊँचे उड़ना है उसको, यह सबने देखा॥

नये सिरे से शुरु हुआ नन्हीं का जीवन।
नये लक्ष्य से और भी महका उसका नव मन ॥

छुटकी शेष हो गई है, नन्हीं की गाथा।
शेष हो रही तुमको पत्रों की यह गाथा॥

प्रवास में अगले हम दूजी कथा कहेंगे।
तुम चाहोगी तो कविता में बात करेंगे॥

बीकानेर 25-9-1997

झरना और पर्वत

झरना और पर्वत आपस में टकराये रस्ते पर।
पर्वत अकड़ के बोला झरने, चलना राह बचाकर॥

मुझसे जो टकराये बेटा, चूर-चूर हो जाये।
तेरी क्या औकात, जो तू मेरे रस्ते पर आये॥

अकड़ भरी थी पर्वत में, झरना है प्यार का सागर।
चलने लगा राह के सारे, पौधों को सरसाकर॥

पर्वत को अपमान लगा,झरने की इतनी हिम्मत।
उत्तर दिये बिना जाता है, इसकी क्या है कीमत!

हाथ पकड़ के रोका उसको, अपना रौब दिखाया।
चमत्कार करके उसने फ़िर अपना कद फ़ैलाया॥

लम्बा-चौड़ा पसर गया, आकाश में ऊँचा उठता।
दुनियां काँप गई, पर्वत क्यों इतना गुस्सा करता

झरने का मन निर्मल है, वह नहीं अकड़ना जाने।
वह तो सबसे प्रेम करे, सबको अपना ही माने।।

भले गिराया नीचे, लेकिन बैर नहीं है मन में।
कल-कल छल-छल, बूंद-बूंद सन्तोष भरा चेतन में ।

चलना उसका काम निरन्तर चलते ही जाता है।
दूर होते हैं दुःख सभी के, राह में जो आता है।।

पर्वत अपनी अकड़ को लेकर, खड़ा वहीं वर्षों से।
नीचे गिराया झरने को तो गिरा रहा वर्षों से।।

झरना कैसे समझ सके, पर्वत के अकड़ की भाषा
जो उसने ऊँचे देखा, तो गिर गया नीचे सारा।।

अम्बर से धरती पर उतरा, छूटा संग पर्वत का।
जार-जार रोया झरना, उपकार बड़ा पर्वत का॥

बुरा न माना रंचमात्र भी, उल्टे गुण गाता है।
पर्वत का बेटा हूं कहता, जहां-जहां जाता है॥

ऊँची-नीची आड़ी-तिरछी, बाधायें आती हैं।
लेकिन नहीं रुके नदिया, वह तो चलती जाती है।

झरना नदी बन गया है अब, धरती पर आकर के
चलते-चलते मिल जायेगा, सागर में जाकर के॥

तुम भी ऐसा कल-कल करना, जीवन सरल बनाना।
ऊँचाई भी पा लो तो, पर्वत सी अकड़ न लाना॥

कबूतर की पीड़ा

एक कबूतरऔर कबूतरी, बैठे नीम की डाल पर।
प्रेम से दोनों बतियाते हैं, झूल रहे हैं डाल पर॥

गुटर गूं गुटर गूं करके, कबूतरी ने छेड़ी बात।
क्यों इतनी गर्मी है प्यारे,क्यों नहीं आती है बरसात?

पहले तो इस पेड़ पे प्यारे! हवा तेज आ जाती थी।
सूखे पत्ते और निम्बोली, खुद ही झड़ जाती थी॥

सूखे पत्ते सर-सर करते, क्या संगीत सुनाते थे।
निम्बोळी चुनने को कितने सारे बच्चे आते थे?

वह मासूम सी मुस्कानें और वे प्यारी-प्यारी बातें।
बड़े मजे से सुनते थे हम, दोनों बच्चों की बातें॥

उनकी चें-चें में तो हमको समझ नहीं था कुछ आता ।
क्या वे भी कुछ समझते होंगे, क्या था भाषा से नाता ?

खुश होकर यूं याद किया था कबूतरी ने बच्चों को।
जाने अब क्यों ना आते, क्या हो जाता है बच्चों को?

कहा कबूतर ने बच्चे निम्बोली खाने आते थे।
मीठा रस निम्बोली का चखकर बच्चे हर्षाते थे॥

इस मिठास की इक-दूजे से चर्चा करते बैठ के।
अपना भी जी खुश करते थे, इसी जगह पर बैठ के॥

क्या बोलें अब हवा बन्द है, चारों तरफ़ मकान बने।
नीम पेड़ तो छोटा रह गया, कंगूरे आलीशान बने।

बच्चे तो काफ़ी हैं लेकिन सब पिंजरों में बन्द हैं।
इन ऊँची मीनारों के छोटे दड़बों में बन्द हैं॥

पता नहीं किस राक्षस ने अपना साम्राज्य बढाया है।
प्यारे-प्यारे बच्चों को, पिंजरों में ला बैठाया है॥

उन राक्षस ने पेड़ भी अपने हजारों-लाखों काटे।
उजड़ गया वह खिलता उपवन, बस अब कांटे ही कांटे॥

बच्चे अगर नहीं आयेंगे, उनकी हंसी न आयेगी।
मुक्त हवा कैसे आयेगी, कैसे खुशी भी छायेगी?

फ़ूल खिलेंगे नहीं बाग में, फल पककर ना टपकेंगे।
कैसे तितली नाच दिखाये, भंवरे कैसे लपकेंगे?

चर्चा करके दुखी हो गये, कबूतरी और कबूतर।
बोलो बिटिया क्या हो उनके इन प्रश्नों का उत्तर?

गणेशजी की सूंड

अच्छा तो बिटिया रानी क्या तुम बतला सकती।
गणेशजी के सिर पर लम्बी सूंड कहां से आती?

बड़ा भाई कार्तिक तो बिल्कुल सीधा-सादा वीर।
तारकासुर का वध करता है, कार्तिकेय प्रवीर।।

चलो सुनाता हूं तुमको मंगलमूर्ति की गाथा।
नर शरीर पर कैसे आया था हाथी का माथा!

पार्वती का नन्हा सा गणेश आंगन में खेले।
माता हंसकर बोली तू मुझको पहरे में ले ले।।

देख, ध्यान रखना कोई, मुझसे पूछे बिन घर में।
पैर नहीं रख पाये बेटा, आज मेरे आंगन में।।

मां की आज्ञा पाकर बालक बैठा दरवाजे पर ।
अपने सारे हथियारों को सजग, साथ में लेकर ।।

योगायोग से उसी समय, शिवजी खुद आये घर पर।
बालक बोला मां को पूछके घुसना घर के अन्दर॥

पहले तो आश्चर्य हुआ फ़िर शिवजी हुये नाराज।
अपनी जिद्द से हठी गणेश, फ़िर भी ना आया बाज॥

शिवजी ने क्रोधित होकर अपना त्रिशूल चलाया।
बालक का कट गया शीश तब होश पिता को आया

कोलाहल सुनकर पार्वती भी दरवाजे पर आई।
कटा शीष देखा बालक का गुस्से से चिल्लाई॥

मेरे बेटे को वापस जिन्दा करना ही होगा।
चाहे कुछ भी करें इसे वापस लौटाना होगा॥

देखा तो धड़कन जारी थी, लेकिन मस्तक चूर।
यह तो वापस जुड़ नहीं सकता, हर कोई मजबूर॥

शिवजी बोले नन्दी से, तुम जल्दी दौड़ के जाओ।
सामने जो भी मिले उसीका मस्तक काट के लाओ॥

नन्दी ने देखा हाथी का प्यारा बच्चा एक।
फ़ौरन गर्दन काटी उसकी, देर ना की क्षण एक॥

शल्य-क्रिया से शिवजी ने मस्तक को धड़ से जोड़ा।
जल्दी की, सांसे चलने तक, पूरा ठीक से जोड़ा॥

शल्य-क्रिया का चमत्कार, सारी दुनियां में पहला।
है गणेश देवों का राजा, पूजित सबसे पहला॥

पढे-लिखों के गुरु हैं गणपति, बुद्धिदायक देव।
हाथी का मस्तक, नर तन है, वे देवों के देव॥

बिटिया रानी जानवरों को, बुद्धिहीन समझो मत।
उनकी सूझ तेज मानव से, हैं सब इससे अवगत॥

गणपति और मारुति, दोनों देते हमको सीख।
पशु मानव से बेहतर होते, पढ़ता हमको दीख॥

लौट के बुद्धू घर को आये

सुन लो नन्हीं एक चुटकुला, हंसी आयेगी तुमको।
अभी सुना है एक मित्र से, हंसी आ रही मुझको।।

पिकनिक करने गये दोस्त दो, राम और श्याम हैं नाम
गहरे जंगल में पहुंचे, करके तालाब में स्नान।।

भीगे कपड़ों को साइकिल पर डाल के आगे निकले।
सूख रहे हैं कपड़े दोनों, बस नंगे ही निकले।।

जंगल में एक गधा मिला, तो श्याम के मन में आया
पहली बार सवारी करना, श्याम के मन को भाया।।

उतरा साईकिल से नीचे और गधे को जाकर पकड़ा।
शायद गधा जंगली था, वह बड़े जोर से अकड़ा ।।

कान पकड़ के गदहे का, जो श्याम विराजे उसपर।
मार दुलत्ती नीचे पटका, गदहे ने घबराकर।।

पीछे से फ़िर श्याम ने आकर, घाव जरा सहलाये।
रस्सी बांध के गदहे पर, चढने की कला बताये।।

पाजामें की रस्सी खोल के, बांधी उसके मुंह पर।
नंगे श्याम ने टाँग फ़ंसाकर, करी सवारी उसपर॥

दौड़ा तेज गधा और सामने तार आ गया लम्बा।
हो सकता है टूट पड़ा हो, बिजली का कोई खम्बा॥

टाँग फ़ंसी है नीचे से तो उतरे कैसे श्याम?
घायल हुये तार से, पीछे चिल्लाते हैं राम॥

छोड़ी टाँग-गिरे नीचे तो श्याम ने आ संभाला।
घाव भूलकर श्याम कहे, गदहा ले गया है नाड़ा॥

पाजामें का नाड़ा पाने श्याम ने दौड़ लगाई।
खाई दुलत्ती गदहे की तो श्याम को हंसी आई॥

राम-श्याम दो दोस्त, लौट के देर रात घर आये।
घायल थे पर जान बची घर लौट के बुद्धू आये॥

तुमको लगे चुटकुला लेकिन घटना पूरी सच है।
उसी दोस्त के बचपन की प्यारी भी है और सच है॥

पटरी और पहिये

पिछले दो दिन से जो गाड़ी, खड़ी हुई पटरी पर।
पहिये पूछ रहे पटरी से, बहना ये क्या चक्कर?

हम-तुम दोनों एक ही मां के, पेट से बाहर आये।
पढे एक ही शाला में और एक ही घर में ब्याहे।।

खान हमारी माता है, रोलिंग-मिल अपनी शाला।
रेलवे है ससुराल हमारा,पड़ा एक घर पाला।।

फ़िर ये कैसी बात पटरिया, एक जगह तू स्थिर है।
क्यों मैं भागा फ़िरता हूं, पांवों में ज्यों चक्कर है।।

तुझसे मेरा स्नेह पुराना, छोड़ न पाऊँ इक पल।
जहां-जहां मैं जाता हूं, तू मिल ही जाती हरपल।।

समझ नहीं पाता, क्या तू भी मुझे चाहती इतना?
छोड़ा कभी न साथ, स्वयं को फ़ैलाया है कितना?

एकपल सांस मिले न मुझको, सारा जीवन दौड़ा।
तेरे पास शान्ति इतनी, मुझे भी दे दो थोड़ा।।

पटरी सुनके मुस्काई,औरपहिये को पुचकारा।
आओ भैया पास मेरे, मैं दे दूं तुम्हें सहारा।।

दौड़ते हो तुम सारा जीवन, यही तुम्हारा काम।
इससे तो तुम थक नहीं सकते, यह तेरा विश्राम।।

समझ गई मैं दर्द तुम्हारा, दौड़ रहे हो व्यर्थ।
मंजिल तुम्हें कभी न मिलती, बिसरा जीवन अर्थ।।

इसी व्यर्थता का अहसास, मूल है बैचेनी का।
वरना तो जीवन तेरा, आधार है सुख-चैनी का।।

भोले भैया खुशकिस्मत हो, गतिमय रहते हरदम।
रुके पड़े रहने की पीड़ा, क्यों समझोगे हमदम।।

ईर्ष्या की ही बात हो तो, मुझको ही होगी तुमसे।
लेकिन मेरे प्यारे भैया, क्या बोलूं मैं तुमसे।।

भूल के अपना दर्द ये सोचो, कितने जन खुश होते।
गाड़ी से लाखों ही जन, मंजिल पाकर खुश होते।।

इक परम्परा तेरी-मेरी, औरों के काम आयें।
अपना जीवन सफ़ल सदा, स्थिर हों या चल पायें।

Up Coming

1- उद्भव उत्कर्ष और अन्त – दूसरा संस्करण (चार भाग)
2- औसान (उपन्यास)
3- कहानी संग्रह
4- नाटक संग्रह
5- शतक सीरिज (अलग-अलग 8 काव्य-संग्रह)
6- विश्व-विषाद योग (श्रीमद्भग्वद्गीता के प्रथम अध्याय की काव्यात्मक टीका)
7- विश्व-विषाद योग भाग-2 (कुण्डली-शतक)
8- टूटता भारत (षड्यन्त्र शतक)
9- धृत्यायन (नई शैली का महाकाव्य)
10- परिवार-सप्तक
11- रामचरितमानस और वेद
12- पर्यावरण शतक
13- सोरठा (सेठिया साहित्य का अनुवाद)
14- नन्हीं सी उड़ान
15- धोती शतक
16- शीना हत्या-काण्ड शतक (कुण्डली छन्द में सामाजिक विश्लेषण)
17- सिंगुर के आर्थिक-सामाजिक समीकरण
18- साँप (निर्माणाधीन फ़िल्म की विषय-वस्तु)
19- साधक के पत्र
20- संस्मरण
21- श्राद्ध (जिया गया कर्म-विचार)
22- सिनेमा पहेली
23- ट्टिपणी-शतक
24- आनन्दिनी मीरा